पुस्तकालय व पुस्तकों के इस्तेमाल की सम्भावनाएँ

हृदय कान्त दीवान

पृष्ठभूमि

स्कूलों में पुस्तकालय की बात नई नहीं है। मुझे याद है 60 के दशक में, जब मैं स्कूल में था, तब भी हमारे स्कूल में पुस्तकालय था। उसके बाद 80 के दशक से इस शताब्दी के आगमन तक, और उसके बाद भी स्कूलों में अनुवर्तन के लिए अथवा प्रशिक्षण या शिक्षकों के साथ बैठकों में जाने पर भी बहुत-से स्कूलों में पुस्तकालय दिख जाते थे। कई राज्यों में राज्य स्तरीय शैक्षिक समूह के साथ परिचय, और इनके साथ गहन अन्त:क्रिया भी हुई। इस समूह में स्कूल के सबसे क़ाबिल समझे जाने वाले शिक्षक, व डाइट के संकाय सदस्यों के साथ-साथ राज्य में स्कूली शिक्षा को नेतृत्व प्रदान करने वाले राज्य शैक्षिक शोध एवं प्रशिक्षण परिषद् के सदस्य भी थे। इन समूहों के ज़िम्मे कई काम थे। ये काम पाठ्यचर्या व पाठ्यक्रम निर्माण से शुरू होकर पाठ्यपुस्तक लेखन, शिक्षक प्रशिक्षण की संकल्पना व स्वरूप तय करने के बाद मॉड्यूल बताने और उसका इस्तेमाल वास्तविक प्रशिक्षणों में करने तक जाते थे। उनके साथ हमारे काम के दायरे में यह सब भी शामिल थे। इन सभी संस्थानों में मेरे देखे हुए बहुत सारे स्कूलों की तरह पुस्तकालय भी थे। समस्या यह थी कि न सिर्फ़ अधिकांश स्कूलों में, बल्कि लगभग सभी राज्य स्तरीय ज़िम्मेदारी वाले संस्थानों में भी पुस्तकें बन्द ताले में रहती थीं। वे सामान्यतः सिर्फ़ तब खोली जाती थीं, जब उनको सुरक्षित करने के लिए उनपर दवाई छिड़की जानी हो। ऐसे में, किताबों को निकालना व बच्चों को पढ़ने के लिए देना, चाहने पर भी नहीं हो पाता था। जो बच्चे ऐसे विरले स्कूलों में पढ़े हैं, जहाँ पुस्तकालय के लिए समय था और यह अपेक्षा थी कि वे वहाँ से पुस्तकें ले सकते थे, या फिर टाइम टेबल में एक तय समय था जो पुस्तकालय के लिए था, वहाँ के बच्चों में पुस्तकों और पढ़ने के प्रति लगाव बाद में भी

दिखता है। यह ज़रूरी नहीं कि सभी में हो, किन्तु उनमें से बहुतों में किताबों का आदान-प्रदान व उनपर बातचीत स्वत: होती रहती थी, और अब भी होती है। स्कूली शिक्षा व शिक्षक शिक्षा के लिए बने अकादमिक संस्थानों में भी पुस्तकालय में पुस्तकों तक पहुँचना मुश्किल था। हालाँकि, वहाँ तक पहुँचने की इच्छा भी फ़ैकल्टी सदस्यों की नहीं ही होती थी।

पुस्तकों में रुचि कैसे बने

यह स्पष्ट है कि बचपन से ही पुस्तकों से परिचय व उनसे अन्त:क्रिया का मौक़ा न सिर्फ़ पढ़ने को स्वाभाविक, रोचक व आनन्द का माध्यम बनाने में योगदान करता है, वरन् पढ़ना सीखने में भी मदद करता है। सभी शैक्षणिक विमर्श में पढ़ना सीखने के लिए प्रिंट रिच परिस्थिति की बात होती है। इसके लिए बहुत-से तरीक़े भी सुझाए जाते हैं। इन तरीक़ों में दीवारों पर चार्ट, दीवार अख़बार अथवा मैगज़ीन, साइन बोर्ड, ख़बरों का सार, आदि शामिल हैं। इन सबमें स्कूल व कक्षा पुस्तकालय, रीडिंग व लर्निंग कॉर्नर जैसे कई और सुझाव भी दिए जाते रहे हैं। हाल में ही आई *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* और *स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2023* ने भी इन्हें केन्द्रीय स्थान दिया है, व कई महत्त्वपूर्ण मसले रखे हैं। सिर्फ़ स्कूली शिक्षा और भाषा व साहित्य ही नहीं, शिक्षा की सम्पूर्णता में शिक्षा के सभी स्तरों के लिए लक्ष्यों में पढ़ने की क्षमता, इच्छा व आदत का होना एक बुनियादी चट्टान है। चूँकि यह इतना महत्त्वपूर्ण लक्ष्य है, अत: यह सोचना आवश्यक हो जाता है कि इसके मायने क्या हैं; स्कूल में सीखने-सिखाने व आकलन के ढंग के लिए इसके निहितार्थ क्या हैं; और यह हो पाए, इसके लिए स्कूलों और समाज को किन आधारभूत मसलों पर सोचने की ज़रूरत होगी।

शिक्षण के मसले में क्या किया जाना है और कैसे, इसके बीच गहरे अन्तर्सम्बन्ध होते हैं। अकसर क्या और कैसे की बात करते समय क्यों से जुड़े कुछ बुनियादी सिद्धान्तों को अनदेखा कर दिया जाता है। स्कूलों में प्रिंट रिच माहौल व पुस्तकालय का होना संसाधनों का प्रश्न है। लेकिन जैसा ऊपर के उदाहरणों से साफ़ है, संसाधनों के होते हुए भी सीखना, सीखने वाले व सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में इस्तेमाल के लिए उपयुक्त सामग्री की हाथ में उपलब्धता, व उसके उपयोग के दृष्टिकोण और उसके बारे में समझ से प्रभावित होता है। वह इन बातों से भी प्रभावित होता है कि उस संस्थान की संस्कृति क्या है, और वहाँ पढ़ने की आदत व आवश्यकता को लेकर किस तरह का माहौल है।

चित्र : प्रशांत सोनी

इस्तेमाल के लिए सरलता से उपलब्ध हो पाने की राह में

अन्य अड़चनें भी हो सकती हैं। हालाँकि, यह अड़चनें अब कुछ हद तक कम हुई हैं। यथा– किताबों का फटना, उनका नवीनीकरण, रिप्लेसमेंट, उन्हें अत्तो (राइट ऑफ़) कर पाना, आदि। इसके अलावा, पुस्तकों का लम्बे समय तक उपयोग हो पाए, इसके लिए पुस्तकालय व उसकी किताबों की देखभाल और उसकी व्यवस्था में समय लगाने की आवश्यकता होगी। किताबें पढ़ी जाएँगी तो इस्तेमाल के कारण वे धीरे-धीरे कटेंगी-फटेंगी भी। ऐसे में, दो बिन्दुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है। एक यह कि कोई व्यक्ति हो जिसके पास थोड़ा समय हो, किताबों की देखरेख, उन्हें व्यवस्थित करने और समय-समय पर उनकी मरम्मत का। इस काम में बच्चों की बख़ूबी मदद ली जा सकती है। लेकिन यह मदद तभी मिल पाएगी, यदि कोई उन्हें इस कार्य में शामिल कर पाएगा। *स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2023* (NCFSE 2023) ने भी बच्चों को इस तरह के रख-रखाव में शामिल करने का सुझाव दिया है। इससे पुस्तकों व पुस्तकालय के प्रति उनमें अपनत्व बढ़ेगा। उनकी मदद किताबों का ब्योरा व उन्हें सुरक्षित रखने में भी मिल सकती है, किन्तु उसके लिए समय व धैर्य की ज़रूरत होगी। ज़ाहिर है, यह तभी हो पाएगा यदि स्कूल में कुछ शिक्षकों की ख़ुद पढ़ने व पुस्तकालय का उपयोग करने में रुचि होगी। लगभग सभी योजनाओं व स्कीमों में यह प्रावधान और कल्पना है कि स्कूल के पुस्तकालय में शिक्षकों के लिए भी पुस्तकें होंगी। इसके साथ, अब यह भी माना जाने लगा है कि पुस्तकें ताउम्र रहने वाली नहीं हैं, और अब वह टूट-फूट वाली सामग्री में आती हैं। उन्हें कुछ वर्षों में स्टॉक से हटाया जा सकता है, और कम-से-कम काग़ज़ पर यह भी माना गया है कि पुस्तकों को कुछ समय बाद अत्तो मानकर दोबारा दे दिया / ले लिया जाएगा।

सार्थक पुस्तकालय

स्कूलों में बच्चों के लिए पुस्तकालय तभी सार्थक हो सकते हैं, जब शिक्षक भी उनका उपयोग करें और बच्चों के लिए पढ़ने के साथ-साथ स्वयं के लिए भी ज़्यादा पढ़ें। हमारी शिक्षा व्यवस्था में पुस्तकें पढ़ने के लिए कोई प्रेरणा नहीं मिलती। परीक्षाओं के आकलन में पाठ्यपुस्तक का ही पढ़ा हुआ होना ज़रूरी नहीं है, फिर अन्य पुस्तकों व पुस्तकालय का तो क्या ही सोचना! स्कूल, महाविद्यालय शिक्षक बनने की तैयारी में कहीं भी यह अपेक्षा नहीं होती कि आप व्यापक तौर पर तो क्या, कुछ भी स्वयं गम्भीरता से पढ़ेंगे। औपचारिक पढ़ाई के अनुभव में कहीं भी पुस्तकालय से कुछ पढ़ने अथवा सिर्फ़ पढ़ने के लिए पढ़ने की अपेक्षा नहीं होती। आगे बढ़ने की कड़ी प्रतिद्वन्द्विता के चलते, अधिकांश परिवार, समाज का माहौल व बहुत-से शिक्षक भी परीक्षा हेतु सीमित सामग्री के अलावा कुछ और नया

चित्र : प्रशांत सोनी

पढ़ने के लिए टोकते हैं। शायद स्कूलों को स्वयं की जिज्ञासा व स्वयं के लिए आनन्द के उद्देश्य से भी पढ़ने के महत्त्व की पहचान की ज़रूरत है।

ऊपर जो कहा गया है, उसके कुछ निहितार्थ हैं। एक निहितार्थ स्कूल के शिक्षकों व वयस्कों के बारे में है। स्पष्ट है, इसका तात्पर्य यह भी है कि उन्हें (शिक्षकों व अन्य को) स्वयं किताबों व पुस्तकालय में रुचि रखनी चाहिए। स्वयं शिक्षकों को भी पुस्तकालय जाकर पढ़ना चाहिए। इस तरह से ही किताबों के इस्तेमाल की चर्चा शुरू हो पाएगी। उच्च कक्षाओं, उच्च शिक्षा व शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में यह अत्यन्त आवश्यक है। कक्षाओं में पढ़ी हुई किताबों, ख़ासतौर पर अच्छी साहित्यिक रचनाओं व उनके अंश सुनाने से सम्पूर्णता से सीखने व पढ़ने से प्यार करने में मदद मिल सकती है। यह हम जानते ही हैं कि कोई भी तरीक़ा कितने भी अच्छे ढंग से किया गया हो, सभी को प्रभावित नहीं करता। फिर भी गणित की कक्षा में भी कम-से-कम 5 प्रतिशत समय विभिन्न गणितीय टेक्स्ट पढ़ने पर लगाना गणित सीखने में, और इसी तरह विज्ञान या किसी अन्य विषय की कक्षा में उस विषय से सम्बन्धित टेक्स्ट पढ़ना उस विषय को सीखने में मददगार है।

दूसरी बात यह है कि चाहे बड़े बच्चों की कक्षाएँ हों अथवा छोटों की, पढ़ने में रुचि पैदा करने और पढ़ना सीखने के लिए (पढ़ने को शुरुआती स्तर से सीखने के लिए भी) आवश्यक है कि बच्चे स्वयं पढ़ें, और अपने लिए पढ़ें। पुस्तकालय गतिविधि सत्र के नाम पर पढ़कर सुनाना या फिर उन्हें कुछ विशेष पढ़ने के लिए निर्देशित करना, अथवा यह पूछना कि बताओ तुमने क्या पढ़ा, पढ़ने में रुचि नहीं बढ़ाता। इसी तरह, यह पूछा जाना कि इससे क्या समझा, ऐसे सभी कार्य बहुत उपयोगी नहीं हैं। पुस्तकालय एक कक्षा से फ़र्क़ है। यह किताबों में और पढ़ने में रुचि जगाने के लिए है। इसलिए पुस्तकालय में बच्चों पर पढ़ना सिखाने अथवा ज़बरदस्ती अभिव्यक्त करने का दबाव बनाना उन्मुक्त पढ़ना सीखने में बाधा बन सकता है। पढ़ने वाला ख़ुद पुस्तकालय के बाहर निकलकर बात करे। वह घर जाकर माँ या पिता अथवा अन्य लोगों को अपने उत्साह से पढ़कर सुनाए, और जो पढ़ा उसे मन से सुनाए, तब बहुत अच्छा है। किन्तु पुस्तकालय के अन्दर ही शिक्षक द्वारा पूछा जाना, कि क्या पढ़ा और क्या समझा, आमतौर से आतंकित करने वाला ही होगा। इससे भी चिन्ताजनक बात यह है कि वयस्कों का नैतिक विकास पर बल उनके लिए हर कार्य का केन्द्र इस प्रश्न को ही बना देता है, "तुमने इसे पढ़ने अथवा सुनने या करने में क्या नैतिक बातें सीखीं?" इसलिए जितना यह आवश्यक है कि अच्छा पुस्तकालय बनाने और चलाने के लिए संसाधन हों, उतना ही आवश्यक है कि बच्चों की पुस्तकों के साथ अन्त:क्रिया स्वायत्त, स्वयं द्वारा निर्देशित व समय की बंदिश से जड़ न हो जाए।

यह ग़ौर करने योग्य पहलू है कि पुस्तकालय आधारित अन्त:क्रियाएँ सीखने व उत्साह बढ़ाने में कई तरह से मददगार हो सकती हैं। किन्तु कई गतिविधियाँ बोझिल भी बन सकती हैं। पुस्तकालय से बच्चों को जो अनुभव व मदद मिल सकती है, उन्हें संकीर्ण अक्षर पहचान जैसे कार्यों तक सीमित नहीं रखना चाहिए। जितना ज़रूरी यह प्रश्न है कि क्या किया जाना चाहिए, उतनी ही ज़रूरी यह समझ भी है कि क्या नहीं किया जाना चाहिए। पुस्तकालय के लिए संसाधन कई तरह से जुटाए जा सकते हैं। इसमें कई जगहों पर समाज से पुस्तकों अथवा वालंटियर समय के रूप में भी मदद मिल सकती है।

पुस्तकालय किताबों व पढ़ने वाले के बीच संवाद है; बच्चे ने, पाठक ने जो पढ़ा उसपर चर्चा करना भी रुचि बनाने में मदद नहीं करता। पुस्तकें पढ़ने की आदत विकसित हो जाने पर, पढ़ने के उपरान्त व विवेचना में रुचि होने पर ही व्यवस्थित तौर पर ऐसी चर्चाएँ आयोजित हो सकती हैं। और तभी भी वह पुस्तकालय के माहौल में होना उपयुक्त नहीं है। यदि स्कूल में रचे मौक़ों में बच्चों को कुछ प्रस्तुत करने का मौक़ा हो, तब सम्भव है वे उसमें स्वत: ही पढ़ी हुई किसी रचना का उपयोग करें। वे अपनी लेखनी व अभिव्यक्ति में भी पढ़ी सामग्री को गूँथें, किन्तु यह स्पष्टत: खुली परिस्थिति में और बिना बोलने के बन्धन अथवा आकलन के डर के हो। स्कूल के पुस्तकालयों का मक़सद बच्चों का किताबों से रिश्ता बनाना है, उन्हें कुछ 'सिखा' ही देना नहीं।

अन्त में

यह सब कहना सरल है, करना बहुत मुश्किल। पुस्तकालय व पढ़ने की आदत, जो पढ़ना चाहते हैं उसके चुनाव में स्वायत्तता, समाज के व्यापक ताने-बाने और उसमें पढ़ने के प्रति समझ से संचालित होती है। ज़्यादा पढ़ने के प्रति रुचि की ओर बढ़ने के लिए स्कूलों के साथ-साथ व्यापक समाज में पुस्तकों की उपलब्धता व उनके इस्तेमाल की सम्भावना बनाना महत्त्वपूर्ण है।

हृदय कान्त दीवान वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलुरू में प्रोफ़ेसर हैं और शुरुआती दिनों से ही फ़ाउण्डेशन से निकटता से जुड़े हुए हैं। आप पिछले पच्चीस वर्षों से शिक्षकों के पेशेवर विकास और व्यवस्थागत परिवर्तन के लिए काम कर रहे हैं।
सम्पर्क : hardy@azimpremjifoundation.org